संगीतज्ञ स्व. श्री राधाशरण का साहित्य एवं संगीत

RINKU RANA
Research Scholar, Department of Music, Rajasthan University, Jaipur

सार संक्षेपिका

स्व. श्री राधाशरण ने विभिन्न रचनाओं का सृजन किया एवं उन्हे विभिन्न रागों मे संगीत बद्ध किया। राधाशरण जी गूढ़ साहित्य के ज्ञाता थे। लोक साहित्य, हिन्दी साहित्य व साधुजनों के भावों को एवं शास्त्रीय संगीत के पक्ष को आपने अपने अन्तःकरण में इस तरह बिठा लिया था कि जब जिस विधा को आप गाते थे तो साहित्य एवं स्वर का भाव श्रोता वर्ग के अन्तःस्थल में उतरता ही चला जाता था। आपको दो ही शौक रहे एक संगीत दूसरा साहित्य। राधाशरण जी संगीत को कला अवश्य मानते थे पर आध्यात्म पर अवलम्बित संगीत कला को ही तरजीह देते थे। संस्कृत के, व्याकरण के, साहित्य के विद्ववान पंडित आपको सम्मान देते थे और आपके गायन की विशेषता, काव्य की विशेषता, सहजभाव की विशेषता के कारण लोग आपसे आकर्षित होते थे।

बीज शब्द

स्व. श्री राधाशरण, साहित्य, संगीत

भूमिका

यद्यपि स्थूल रूप से ललित कलाओं में भिन्नता स्पष्ट दिखाई देती है और है भी, परन्तु एक धरातल ऐसा भी है, जिस पर पहुंचकर सभी ललित कलाएँ तात्विक दृष्टि से अंतःसंबद्ध और समान सिद्ध होती हैं। उदाहरण के लिए अनेक ऐसी मूर्तियाँ हैं, जिनमें काव्य के विषय को उत्कीर्ण किया गया है। इस प्रकार किसी एक कला के भाव को स्पष्ट करने के लिए अन्य कलाओं का सहारा लेना अंतःसंबंध का सूचक है।

भारतीय साहित्य के काव्य में वर्णित राधा–कृष्ण ने चित्रकला के राधा–कृष्ण को प्रभावित किया है। प्रसिद्ध ग्रन्थ 'उमरखैयाम' का तो सारा काव्य ही चित्रमय हो गया है इसलिए कहा जाता है कि 'कविता' शब्दों के रूप में 'संगीत' है और 'संगीत' स्वर के रूप में 'कविता' है।

भारत में काव्य, अभिनय, नृत्य और संगीत का सहअस्तित्व देखा जा सकता है ये कलाऐं एक–दूसरे की पूरक हैं। इनका सह–अस्तित्व सौन्दर्यबोध को समृद्ध करता हैं। साहित्य और कला का अटूट संबंध होता है। ललित कलाएँ किसी भी देश की संस्कृति की पहचान, उसका प्रतीक, उसका गौरव होती है। भारत देश तो विविध कलाओं और कलाकारों से भरा पड़ा है। इसीलिए तो भारत की संस्कृति विश्वविख्यात है।

विद्वत्जनों का मानना है कि संगीत साहित्य के बिना व साहित्य संगीत के बिना अधूरा माना जाता है। ये दोनों ही कलाऐं एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं। संगीतज्ञ राधाशरण जी ने भी विभिन्न साहित्यिक रचनाओं का सृजन किया, जो हिन्दी, सधुक्कड़ी व लोक भाषाओं मे हैं।

हिन्दी साहित्य कोष के अनुसार ''कलाओं को सामान्यतः दो वर्गों में विभक्त किया जाता है – ललित कला तथा उपयोगी कला। ललित कला के अन्तर्गत वास्तुकला अथवा स्थापत्य कला, मूर्तिकला, चित्रकला, संगीत कला और काव्यकला, ये पाँच भेद माने जाते हैं। इनमें से प्रथम तीन अर्थात् वास्तुकला, मूर्तिकला व चित्रकला को दृश्य माना जाता है तथा संगीतकला और काव्यकला को प्रमुखतः श्रव्य कहा गया है। ललित कलाएँ मनुष्य के सौन्दर्य–बोध की विकसित अवस्थाओं की परिचायक हैं।''[1]

कला एवं साहित्य

भारतीय कला (चित्रकला) साहित्य के अन्तर्गत 'रागमाला' चित्रों के द्वारा हमें संगीत की राग–रागनियों का चित्रात्मक दर्शन मिलता है। 'रागमाला' के चित्रों में राग–रागनियों से सम्बद्ध वातावरण, दृश्य, विषय, रस, काल और भाव आदि का ऐसा स्वरूप, प्रकृति, रस और समय आदि का पूर्ण ज्ञान हो जाता है। यहां संगीत–कला जिन दृश्य–अदृश्य सूक्ष्मताओं का विवेचन ध्वनि तथा लय के द्वारा करती है, उन्हें चित्र–कला रंग–रेखाओं के द्वारा व्यक्त करती है।[2]

काव्य का आधार कल्पना है जो भौतिकता से मुक्त है। काव्य का आधार शाब्दिक संकेत (अक्षर) होते हैं। ये संकेत जीवन की घटनाओं, मन के विचारों आदि को अभिव्यक्त करते हैं।3

साहित्य एवं संगीत कला के अनुरागी राधाशरण

भक्तिकाल के सभी सन्त, फकीर, साहित्यकार जैसे सूर, तुलसी, रहीम, कबीर आदि भक्त कवियों का राधाशरण जी पर भी मानसिक प्रभाव पड़ा व आपका संगीत के साथ–साथ साहित्य की ओर रूझान बढ़ा। संगीतज्ञ राधाशरण जी ने विभिन्न रचनाओं का सृजन किया एवं उन्हे विभिन्न रागों में संगीतबद्ध किया। आपने साहित्यिक रचनाओं के साथ–साथ दोहे, कवित्त व सवैये आदि की रचनाऐं भी की है।

राधाशरण जी जब अपना कोई पद गाया करते थे तो सर्वप्रथम सम्बन्धित दोहे का गायन किया करते थे। इन दोहों का भाव व पद का भाव समानार्थ ही हुआ करता है इसलिए इन दोहों आदि को भजन से पूर्व गाते हुए श्री राधाशरण जी श्रोताओं का बिना रूपरेखा बनाए या कहें कि बिना कथानक के ही दोहों द्वारा यह संदेश दे देते थे कि इसके आगे गाये जाने वाला भजन प्रेम से संबंधित होगा या विरह से अथवा सौन्दर्य से।

उदाहरणार्थ जैसे प्रेम के संदर्भ में श्री राधाशरण जी ने एक दोहा लिखा :

''प्रेम कियो तो निबाहिये, जैसे चातक प्यास।
चाहे अमृत जल बहे स्वाति बूंद की आस।।''

इसी प्रकार श्री राधाशरण ने अनेक दोहों की रचना की।

श्री राधाशरण जी जब किसी पद को गाते तो कौनसा दोहा, कौनसा छंद, कौनसा कवित्त कहाँ प्रयुक्त करना है, यह चेतनता रूपी जागृति ही तो है। ऐसे ज्ञान, सरलता, प्रेम, भक्ति व अविरल बहते भावों की खान थे श्री राधाशरण। साहित्य के आधार पर दोहा, सवैया व कवित्त के जो विद्वान आचार्यों ने नियम बनाए वे समस्त श्री राधाशरण जी के दोहा, सवैया व कवित्त में खरे पाए जाते हैं। यहां यह उल्लेखनीय है कि श्री राधाशरण जी द्वारा किसी विद्यालय में नियमित रूप से शैक्षणिक अध्ययन नहीं किया गया, परन्तु ईश्वरीय कृपा तथा विद्वत्जनों का संग–साथ व बुजुर्गों का आर्शीवाद का ही फल रहा, जिसके कारण श्री राधाशरण जी उच्च कोटि के संगीत के विद्वान होने के साथ–साथ भक्ति एवं साहित्य के भी मर्मज्ञ थे। आपके द्वारा रचित एक पद जो राग भूपाली में है, उसकी कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार है:

''साधो भाई राम नाम रस पीजे।
राम नाम रस बह्यो जात है तृषावन्त है पीजे।।

तात्पर्य है कि भीषण गर्मी में कोई जीव प्यास से बैचेन है और उसी क्षण कोई आकर उसे पानी पिला दें तो वह जीवित हो उठता है इसी प्रकार मनुष्य को राम रूपी रस उस प्यासे की तरह पीते रहना चाहिए।

सभी धर्म सम्प्रदायों का अपने ईष्ट के प्रति यह भाव रहा है कि हमारे गुरु या गुरु के द्वारा ईश्वर की ओर आमुख भक्ति सब कुछ कर सकने में समर्थ है। इसीलिए सभी भक्तों ने एवं कवियों ने अपने ईष्ट के प्रत्येक आयुध को भी ईश्वर रूप ही माना है। इसीलिए कहीं पर चक्र को ही श्रेय दिया गया, कहीं पर गदा को, कहीं पर अंकुश को, कहीं पर वेणु को श्रेय दिया गया। यहां पर श्री राधाशरण जी ने अपने कवित्त मे श्री श्यामसुन्दर की बाँसुरी को सर्वस्व माना और अपने कवित्त में यह कहा है कि :

''बंशी के बजैया को
भरोसो मोहे भारी है।''

एक अन्य पद जिसमें राधाशरण जी ने ईश्वर के प्रति समर्पित भाव को निम्नानुसार प्रदर्शित किया है।

वृन्दावन धाम अपार है मन चल वृन्दावन धाम।
तजझूंठ कपट जंजाल को भजले मन राधेश्याम।।
मूरति मनोहर आपकी मन हरण मोहिनी।
सुन्दर सलोने श्याम को मेरा कोटि कोटि प्रणाम।।
करूणामय हो श्याम तुम करूणा करो मुझ पर।
कर जोर विनती कर रहा ''राधाशरण'' गुलाम।।

जितने भी गायक या साहित्याचार्य हुए हैं, सभी ने स्वर व शब्द का एकाकी भाव नहीं मानते हुए स्वर व शब्द को एकरस कर साहित्य एवं संगीत का तादात्म्य लोक के सामने प्रस्तुत किया है। उपरोक्त पद समर्पण भाव का है जिसे संगीतज्ञ श्री राधाशरण जी ने शब्दानुसार राग पीलू पर आधारित संगीतबद्ध करके राग एवं कविता का सामंजस्य बताया है।

काव्य रूपी शरीर का भाव प्राण होता है। भाव काव्य को न सिर्फ जीवंतता प्रदान करता है, अपितु काव्य सौन्दर्य की रसमयी गत्यात्मकता को भी उदिप्त कर, उसे मन के ग्रहण करने योग्य बनाता है।[4] निश्चय ही रचना ही रचनाकार की अंतःवृत्तियों का रूपाकार है और इसका माध्यम भी होता है। भले ही उसका माध्यम भाषा हो, नृत्य हो, चित्र हो अथवा मूर्ति हो, इन सबमे भाषा ही तो बोलती है। उसे जानने की शर्त है उस भाषा की अनुभूति सामर्थ्य का हममे सामृद्ध।[5]

निष्कर्ष

साहित्य व संगीत कला के क्षेत्र में राधाशरण जी ने अहम भूमिका निभाई है। आपके द्वारा अनेक रचनाओं का सृजन किया गया जो समाज के विभिन्न स्तरों मे अपनी पैठ रखता है। आपने जो भी रचनाऐं लिखी शास्त्र का आधार लिए हुए लिखी। राधाशरण जी ने अनेक रचनाओं को स्वरबद्ध किया, जिनको सुनने पर आपकी कलात्मक दृष्टि व सोच का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। इसी प्रकार साहित्य व संगीत के पुजारी संगीतज्ञ स्व. श्री राधाशरण जी ने भी अपना सम्पूर्ण जीवन कला को समर्पित कर दिया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वर्मा, धीरेन्द्र (1963) संस्करण–2, हिन्दी साहित्य कोष (भाग–1), पृष्ठ सं. 742, ज्ञान मंडल लिमिटेड, वाराणसी।
2. वसंत, संगीत विशारद (2013) संस्करण–27, पृष्ठ सं. 30, संगीत कार्यालय, हाथरस।
3. शर्मा डॉ. मृत्युंजय (2008) संगीत मैनुअल, पृष्ठ सं. 303, एच. जी. पब्लिकेशन्स।
4. श्रीवास्तव विनय (2012)कालीदास, पृष्ठ सं. 41, राजा पॉकेट बुक्स।
5. शर्मा डॉ. राजमणि (1995) संस्करण–1काव्यभाषा रचनात्मक सरोकार, पृष्ठ सं. 2, संजय बुक सैंटर ।